INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF HUMANITIES AND INTERDISCIPLINARY STUDIES
(Peer-reviewed, Refereed, Indexed & Open Access Journal)
DOI : 03.2021-11278686 ISSN : 2582-8568 IMPACT FACTOR : 8.031 (SJIF 2025)

भारतीय दर्शनों में सम्यक्त्व और मिथ्यात्व की अवधारणा की समालोचना

(Criticism of the concept of rightness and wrongness in Indian Philosophies)

डॉ. ऋषभ जैन
असिस्टेंट प्रोफेसर,
जैनदर्शन एवं प्राकृत विद्या शाखा,
केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय,
जयपुर-परिसर, जयपुर (राजस्थान, भारत)

DOI No. 03.2021-11278686 **DOI Link ::** https://doi-ds.org/doilink/10.2025-48422778/IRJHISNC2503014

शोधसार :

बंध और मोक्ष की चर्चा करने वाली भारतीय दर्शन परम्परा मेंसम्यक्त्व और मिथ्यात्व एक महत्त्वपूर्ण अंग है। प्रायः सभी भारतीय दर्शनों में किसी न किसी रूप में, विविध नामों व स्वरूप के अंतर्गत सम्यक्त्व और मिथ्यात्व की अवधारणा को स्थान दिया गया है। यह शोध-पत्र विविध भारतीय दर्शनों में सम्यक्त्व व मिथ्यात्व सम्बन्धी अवधारणा का अवलोकन और समीक्षा प्रस्तुत करता है। किसी दर्शन सम्बन्धी मान्यता को सत्य अथवा असत्य सिद्ध करना इसका उद्देश्य नहीं है।

जैन दर्शन में सम्यक्त्व और मिथ्यात्व को मोक्ष और संसार के मूलभूत कारणों के रूप में प्रस्तुत किया गया है। सम्यक्त्व का अर्थ सत्य श्रद्धान और मिथ्यात्व का अर्थ असत्य श्रद्धान है। बौद्ध दर्शन में सम्यग्दृष्टि को दुःख-निरोध का प्रारंभिक सोपान माना गया है, जबकि नैयायिक परंपरा में तत्त्वज्ञान को मोक्ष का साधन कहा गया है। वेदांत दर्शन में मिथ्यात्व को अज्ञान के रूप में निरूपित किया गया है, जिसका निराकरण ब्रह्मज्ञान से होता है। सांख्य-योग में प्रकृति-पुरुष विवेक ही सम्यक्त्व का आधार माना गया है। चार्वाक दर्शन को छोड़कर सभी प्रमुख भारतीय दर्शनों में किसी न किसी रूप में सम्यक्त्व और मिथ्यात्व की अवधारणा मिलती है।

यह शोध भारतीय दर्शनों में सम्यक्त्व और मिथ्यात्व के विभिन्न स्वरूपों का विश्लेषण कर यह स्थापित करता है कि जैन दर्शन में इनकी अवधारणा सबसे व्यापक और विस्तृत रूप में प्रस्तुत की गई है। अन्य दर्शनों में सम्यक्त्व-मिथ्यात्व के नाम और स्वरूप में अंतर होने के बावजूद उनका मूल उद्देश्य 'अज्ञान का नाश और ज्ञान की प्राप्ति' - एक समान है।

प्रमुख शब्दः *सम्यक्त्व, मिथ्यात्व, जैन दर्शन, भारतीय दर्शन, मोक्ष, तत्त्वज्ञान*

भूमिका :

सम्यक्त्व और मिथ्यात्व प्रमुखरूप से जैनदर्शन के महत्वपूर्ण विषय हैं। इस शोधपत्र में जैनदर्शन में सम्यक्त्व और मिथ्यात्व के स्वरूप का अवलोकन करते हुए शेष भारतीय दर्शनों में उनकी अवधारणा का विचार विवेचनात्मक और समीक्षात्मक पद्धति से किया जाएगा।

सम्यक्त्व और मिथ्यात्व की जैसी गंभीर और विस्तृत चर्चा जैन-दर्शन में मिलती है, वैसे अन्य दर्शनों में नहीं है। तथापि सम्यक्त्व और मिथ्यात्व का जो स्वरूप बताया है, उसके सदृश सिद्धांत प्रायः सभी धर्म-दर्शनों में प्राप्त होते ही हैं।

स्थूल रूप में कहें, तो जैन दर्शन के अनुसार सत्य अर्थ का ज्ञान, श्रद्धान सम्यक्त्व है और असत्य का ज्ञान, श्रद्धान मिथ्यात्व है। यह सम्यक्त्व मोक्षमार्ग का मूल है और मिथ्यात्व संसार का मूल है। मोक्ष की प्राप्ति का प्रथम सोपान, मिथ्यात्व का नाश और सम्यक्त्व की प्राप्ति है।

जो भी दर्शन मोक्ष को स्वीकारते हैं, उन सभी में सम्यक्त्व और मिथ्यात्व की अवधारणा किसी न किसी रूप में होती ही है। उस सम्यक्त्व को ज्ञान, सद्ज्ञान, बोधि,विद्या, सम्यग्दर्शन आदि और मिथ्यात्व को अज्ञान, अविद्या आदि विविध नामों से अभिहित किया है। दु:ख के अभाव के लिए प्रायः सभी ने अज्ञान के नाश और ज्ञान प्राप्ति का सर्वप्रथम निर्देश किया है।

अज्ञान और ज्ञान का स्वरूप दर्शनों में विभिन्न दृष्टियों से मिलता है। कोई नव तत्त्वों के ज्ञान को सम्यक्त्व कहता है तो कोई प्रकृति आदि 25 तत्त्वों के परिज्ञान को। किसी के मत में चार आर्य सत्यों की स्वीकृति ही ज्ञान है, तो कोई प्रमाण आदि 16 पदार्थों के सद्ज्ञान से मुक्ति मानता है। इस प्रकार सम्यक्त्व और मिथ्यात्व के नाम और स्वरूप में विभिन्नता होने पर भी परस्पर में सिद्धांत की समानता है। यहाँ दर्शनों की उस अवधारणा की सत्यता-असत्यता की परीक्षा करना अभिधेय नहीं है। अपितु दर्शनों में वहअवधारणा किस प्रकार है और उसका क्या स्वरूप है, यह समालोचना ही यहाँ कर्त्तव्य है।

भारतीय दर्शनों में एक वैशिष्ट्य यह है कि एक चार्वाक को छोड़कर सभी दर्शन मोक्ष को स्वीकारते हैं, उसे जीव का परमलक्ष्य मानते हैं और उसी में पूर्ण सुख का प्रतिपादन करते हैं। अतः उनमें मोक्ष हेतु सम्यक्त्व और मिथ्यात्व की अवधारणा का होना अधिक संभव है। उनमें अधिकतर दर्शन वैदिक हैं, जिनमें मीमांसक-वेदान्त, नैयायिक-वैशेषिक और सांख्य-योग सम्मिलित हैं। अवैदिक दर्शनों में जैन, चार्वाक और बौद्ध हैं, जिनके विषय में सम्यक्त्व-मिथ्यात्व की समीक्षा की जाएगी।

जैन-दर्शन :

जैनदर्शन में सम्यक्त्व और मिथ्यात्व की अवधारणा मोक्षमार्ग के प्रकरण में प्राप्त होता है। सम्यक् भाव, यथार्थभाव सम्यक्त्व है, और मिथ्याभाव अयथार्थ भाव मिथ्यात्व है। ये सम्यक् और मिथ्या भाव दर्शन-ज्ञान-चारित्र के सम्बन्ध में हैं। तत्त्वार्थसूत्र में दर्शन-ज्ञान-चारित्र में सम्यक् पद जोड़कर मोक्षमार्ग बताया है - **'सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्राणि मोक्षमार्गः[1]'**। अतः सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र मोक्ष के कारण हैं तथा मिथ्यादर्शन-ज्ञान-चारित्र संसार के कारण हैं।

इस प्रकार यद्यपि तीनों गुणों का सम्यक् और मिथ्या भाव सम्यक्त्व-मिथ्यात्व है, किन्तु प्रधान रूप से श्रद्धा के सम्यक् और मिथ्या भाव को ही क्रमशः सम्यक्त्व और मिथ्यात्व कहा जाता है। अतः सम्यग्दर्शन ही समयक्त्व है और मिथ्यादर्शन ही मिथ्यात्व है। यथा समयसार में **'जीवादीसद्दहणं सम्मत्तं'**[2], भगवतीआराधना में **'तं मिच्छत्तं जमसद्दहणं तच्चाण होइ अत्थाणं'**[3] इत्यादि स्थानों पर श्रद्धा के अर्थ में ही सम्यक्त्व और मिथ्यात्व पदों का प्रयोग किया गया है। श्रद्धा ही मार्ग का मूल है। ज्ञान और चारित्र का सम्यक्-भाव और मिथ्याभाव श्रद्धा के आधार पर ही होता है। अतः श्रद्धा का सम्यक् और मिथ्याभाव ही मोक्ष और संसार का आधारभूत कारण है। यही बात अमृतचंद्राचार्य कहते हैं –

तत्रादौ सम्यक्त्वं समुपाश्रयणीयमखिलयत्नेन।

तस्मिन्सत्येव यतो भवति ज्ञानं चरित्रं च।।[4]

[1]उमास्वामी (2013, अध्याय 1, सूत्र 1)
[2]कुन्दकुन्दाचार्य (2010, गाथा 155)
[3]शिवार्य आचार्य (2013, गाथा 59)
[4]अमृतचन्द्राचार्य (2010, श्लोक 21)

अतः सम्यक्त्व का मुख्य अर्थ सम्यग्दर्शन, सम्यक्श्रद्धान और मिथ्यात्व का मुख्य अर्थ मिथ्यादर्शन, मिथ्याश्रद्धान है। दृश् धातु यद्यपि देखने के अर्थ में है, किन्तु मोक्षमार्ग के प्रकरण में श्रद्धान अर्थ में भी इसका प्रयोग होता है[5]।

यह मोक्ष-संसार का आधारभूत श्रद्धान जीवादि तत्त्वार्थों के सम्बन्ध में कहा है। यह कुन्दकुन्द आचार्य के कथन से भी स्पष्ट होता है -

भूदत्थेणाभिगदा जीवाजीवा य पुण्णपावं च।
आसवसंवरणिज्जरबन्धो मोक्खो य सम्मत्तं।।[6]

अर्थात् जीव आदि नौ पदार्थों का यथार्थ श्रद्धान ही सम्यक्त्व है। और इनका विपरीत श्रद्धान ही मिथ्यात्व है। इन तत्त्वों में भी देह और आत्मा का भिन्न श्रद्धान अर्थात् देह का पररूप और जीवात्मा का निजरूप श्रद्धान ही सम्यक्त्व का मूल है। शास्त्रों में इसे ही तत्त्वों का सार कहा है – **'जीवोऽन्यः पुद्गलश्चान्यः इत्यसौ तत्त्वसंग्रहः'**[7]**।**

इनके साथ ही आस्रव-बंध का दुःखरूप व हेयरूप श्रद्धान और संवर-निर्जरा-मोक्ष का सुखरूप व उपादेयरूप श्रद्धान सम्यक्त्व है। इसके साथ ही वीतरागी आप्त-आगम-गुरु के यथार्थस्वरूप का श्रद्धान भी सम्यक्त्व में समाहित है।

सम्यक्त्व के द्वारा ही यह जीव अनादि कालीन मिथ्या-अवभासना को छोड़कर मोक्ष के सन्मुख होता है। इस सम्यक्त्व के बिना ही अनंतकाल से यह जीव संसार की चौरासी लाख योनियों में परिभ्रमण कर रहा है। अतः इस जीव का प्रथम कर्तव्य ही सम्यक्त्व की प्राप्ति और मिथ्यात्व का त्याग है।

इस प्रकार जैनदर्शन में जिनोक्त तत्त्वों के सम्यक् और मिथ्या श्रद्धान के रूप में सम्यक्त्व और मिथ्यात्व का विवेचन प्राप्त होता है।

बौद्ध-दर्शन :

बौद्ध दर्शन में दुःख के अभाव के लिए चार आर्य सत्यों की चर्चा की गई है– दुःख, दुःख समुदय, दुःख निरोध, दुःख निरोधगामिनी प्रतिपद्। संसार में दुःख का ज्ञान, दुःख आर्य सत्य है। उस दुःख का कारण जानना दुःख समुदय है। उस कारण के अभाव से दुःख का निरोध भी संभव है, यह दुःख निरोध है। उस दुःख निरोध का उपाय जानना दुःख निरोधगामिनी प्रतिपद् है। दुःख के अभाव का उपाय तत्त्वज्ञान बताया गया है। सर्वदर्शन संग्रह में कहते हैं – **"तदिदं सर्वं दुःखं दुःखायतनं दुःखसाधनं चेति भावयित्वा तन्निरोधोपायं तत्त्वज्ञानं संपादयेत्।"**[8] इन चार आर्य सत्यों को जानने वाला सम्यग्दृष्टि कहलाता है।मज्झिम निकाय में कुशल और अकुशल को जानने वाले आर्य श्रावक को सम्यग्दृष्टि कहा गया है –**"अरियसावको अकुसलञ्च पजानाति, अकुसलमूलञ्च पजानाति, कुसलञ्च पजानाति, कुसलमूलञ्च पजानाति – एत्तावतापि खो, आवुसो, अरियसावको सम्मादिट्ठि होति, उजुगतास्स दिट्ठि, धम्मे अवेच्चप्पसादेन समन्नागतो, अगतो इमं सद्धम्मं।"**[9] उसकी दृष्टि सीधी होती है, वह धर्म में अत्यंत श्रद्धावान् होता है और धर्म को प्राप्त करता है।

दुःख के अभाव के लिए बौद्धों ने आष्टाङ्गिक मार्ग कहा है। यह मार्ग ही बौद्धों का मध्यम-मार्ग है। इसी मार्ग के द्वारा बौद्धों ने दर्शन की शुद्धि मानी है। धम्मपद में कहा है कि दर्शन की शुद्धि के लिए एक यही मार्ग है, अन्य मार्ग नहीं है– **"एसो**

---

[5]उमास्वामी (2013, 1/2 की वृत्ति) - **'...धातूनामनेकार्थत्वाददोषः...मोक्षमार्गप्रकरणात्।**
[6]कुन्दकुन्दाचार्य (2010, गाथा 13)
[7]पूज्यपादाचार्य (श्लोक 50)
[8]माधवाचार्य (1981, पृष्ठ 76)
[9]त्रिपिटकाचार्य राहुल सांकृत्यायन (1933, 1/1/9)

व मग्गो नत्थञ्ञो दस्सनस्स विसुद्धिया”[10]।

इस आष्टाङ्गिक मार्ग में सर्वप्रथम ही सम्यग्दृष्टि है। बौद्धों के अनुसार चार प्रकार के आर्य सत्यों को व कुशल-अकुशल को जानने वाला ही सम्यग्दृष्टि है। इस प्रकार जैसे जैनदर्शन में सम्यग्दर्शन कहा है, वैसे ही बौद्धों ने दुःख का अभाव के मार्ग का प्रथम ही चरण सम्यग्दृष्टि कहा है।

बौद्धदर्शन में भवचक्र का निरूपण करते हुए प्रतीत्यसमुत्पाद का सिद्धांत बताया गया है। उसका अर्थ है कि एक कारण की अपेक्षा करके आगे के अंग उत्पन्न होते हैं। जहाँ एक से अन्य की उत्पत्ति हो, उससे पुनः अन्य की उत्पत्ति हो, वह प्रतीत्य समुत्पाद है। इसके 12 अंग हैं। एक अंग से अन्य अंग उत्पन्न होता है, उससे अन्य अंग उत्पन्न होता है, इस प्रकार भवचक्र प्रवर्तता है।अभिधम्मकोष में प्रतीत्यसमुत्पाद में अविद्या को ही मूल हेतु कहा है – **“आदिमयोः अविद्यासंस्कारयोः हेतुसंज्ञा”**[11] **।** उस भव चक्र का प्रथम चरण और मूल कारण अविद्या है।

अविद्या के नाश से ही भवचक्र का अभाव हो सकता है। तत्त्वार्थवार्तिक में बौद्धों के मत को प्रस्तुत करते हुए अविद्या को ही भवचक्र का हेतु बताया है और अविद्या के नाश से ही मोक्ष बताया है। वे कहते हैं – **“अविद्याया विद्यातो निवृत्तिः, अविद्यानिवृत्तेः संस्कारनिरोधः, संस्कारनिरोधाद्विज्ञाननिरोधः, एवमुत्तरेष्वपीति। तदेवमविद्यातो बन्धो भवति विद्यातश्च मोक्ष इति।”**[12] पदार्थों में विपरीत निर्णय ही अविद्या है। यथा अनित्य को नित्य मानना, दुःख को सुख मानना आदि। तथा पदार्थों का सद्ज्ञान ही विद्या है। वही मोक्ष का हेतु है।

इस प्रकार बौद्धदर्शन में विद्या और अविद्या के रूप में सम्यक्त्व और मिथ्यात्व सदृश अवधारणा को स्थान दिया गया है।

चार्वाक-दर्शन :

चार्वाक एकमात्र ऐसा भारतीय दर्शन है, जो मोक्ष को सुख के हेतु नहीं स्वीकारता। स्त्री के आलिंगन से उत्पन्न सुख को ही सुख मानते हैं। मोक्ष सुख का उनके यहाँ स्थान नहीं है। वे देह से भिन्न कोई पृथक् आत्मा नहीं स्वीकारते, जिस कारण आत्मा की मुक्ति भी उन्हीं स्वीकार्य नहीं है। उसके मत में देश का नाश ही मुक्ति है। वह देह चार भूतों से उत्पन्न होती है– पृथ्वी, वायु, अग्नि और जल। और नष्ट होने पर इन्हीं में मिल जाती है। अतः उनके मत में मोक्ष की अवाधारणा ही न होने से मोक्ष के हेतुभूत ज्ञान या सम्यक्त्व को भी वे नहीं मान्ते। इसलिए उनके मत में ज्ञान से मुक्ति नहीं होती–**“देहस्य नाशो मुक्तिस्तु न ज्ञानान्मुक्तिरिष्यते”**[13] **।**

इससे यह स्पष्ट है कि चार्वाक दर्शन में सम्यक्त्व और मिथ्यात्व का सिद्धांत या अवधारणा नहीं है।

नैयायिक-दर्शन :

नैयायिक दर्शन में मोक्ष की प्राप्ति के अर्थ तत्त्वज्ञान को साधन माना है। यह तत्त्वज्ञान ही जैन-दर्शन अनुसार स्वीकृत सम्यक्त्व है। नैयायिकों के अनुसार प्रमाण, प्रमेय आदि 16 पदार्थों के तत्त्वज्ञान से मोक्ष की प्राप्ति होती है। न्यायसूत्र के प्रथम ही सूत्र में कहा है – **“…तत्त्वज्ञानान्निःश्रेयसाधिगमः॥”**[14]

नैयायिकों के अनुसार यद्यपि अपवर्गरूप मोक्ष की प्राप्ति दोष, प्रवृत्ति, जन्म और दुःख के अभाव के पश्चात् होती है।

---

[10]भदन्त-आनन्द-कौसल्यायन (1946, 20/2)

[11]वसुबन्धु (1988, 3/26)

[12]उमास्वामी (1982, 1/1); वार्तिक 46, वृत्ति

[13]माधवाचार्य (1981, पृष्ठ 9)

[14]महर्षि गौतम (2000, 1/1/1)

किन्तु उन सबसे पूर्व मिथ्याज्ञान है, जिसके अभाव बिना इन सबका भी अभाव नहीं होता। न्याय सूत्र में कहा है – **"दुःखजन्मप्रवृत्तिदोषमिथ्याज्ञानानामुत्तरोत्तरापाये तदनन्तराभावादपवर्गः॥"**[15] मिथ्याज्ञान का अभाव होने पर क्रमशः दोष, प्रवृत्ति, जन्म और दुःख के अभाव से मोक्ष की प्राप्ति होती है। अतः मोक्ष के लिए मिथ्याज्ञान का अभाव या तत्त्वज्ञान की प्राप्ति ही आधार मानी गई है।

नैयायिकों ने जो मिथ्याज्ञान का स्वरूप बताया है, वह कुछ दृष्टियों से जैनदर्शन में उक्त मिथ्यात्व के स्वरूप के सदृश है। न्याय भाष्य में कहा है – **"आत्मनि तावन्नास्तीति। अनात्मन्यात्मेति। दुःखे सुखमिति। अनित्ये नित्यमिति। अत्राणे त्राणमिति। सभये निर्भयमिति। जुगुप्सितेऽभिमतमिति। हातव्येऽप्रतिहातव्यमिति।"**[16] इस प्रकार आत्मा आदि के विषय में विपरीत ज्ञान होना मिथ्याज्ञान है, वही संसार का मूल है।

उसी भाष्य में तत्त्वज्ञान को मिथ्याज्ञान के विपरीत स्थापित किया है – **"तत्त्वज्ञानान्तु खलु मिथ्याज्ञानविपर्ययेण व्याख्यातम्। आत्मनि तावदस्तीति। अनात्मन्यनात्मेति।..."**अतः आत्मा, सुख आदि के विषय में यथार्थ ज्ञान ही तत्त्वज्ञान है। उस तत्त्वज्ञान से मिथ्याज्ञान का अभाव होता है, अतः वही मोक्ष का मूल है। न्यायभाष्यकार ने आगे उस तत्त्वज्ञान को 'सम्यग्दर्शन' ही कहा है – **"...सम्यग्दर्शनं यथाभूतावबोधस्तत्त्वज्ञानमुत्पद्यते"**[17]।

इस प्रकार नैयायिक दर्शन के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि उसमें सम्यक्त्व और मिथ्यात्व संबंधी सिद्धांत की अवधारणा विद्यमान है। आत्मा आदि विषयक मिथ्याज्ञान ही संसार का बीज है और तत्त्वज्ञान ही मोक्ष का मूल है।

वैशेषिक-दर्शन :

वैशेषिक दर्शन में भीसम्यक्त्व और मिथ्यात्व की चर्चा प्राप्त होती है। वैशेषिकों के अनुसार इच्छा और द्वेष से धर्माधर्म उत्पन्न होते हैं, उनसे सुख-दुःख होता है और सुख-दुःख से पुनः इच्छा-द्वेष होते हैं। इस प्रकार संसारचक्र प्रवर्तमान रहता है। उन इच्छा-द्वेष का कारण मोह है। वह मोह द्रव्यादि छह पदार्थों के अज्ञान से उत्पन्न होता है। इस प्रकार सम्पूर्ण संसार का कारण एक अज्ञान ही सिद्ध है।

द्रव्य, गुण, कर्म, सामान्य, विशेष, समवाय – इन छह पदार्थों के तत्त्वज्ञान से मोह का अभाव होता है। उस मोह के अभाव से ही क्रमशः सुख-दुःख, इच्छा, द्वेष का अभाव होता है। उनके अभाव से धर्माधर्म का अभाव होता है। उनके अभाव से संयोग का अभाव और अप्रादुर्भाव होता है, वही मोक्ष है। इस प्रकार मोक्ष का आधार तत्त्वज्ञान ही है। राजवार्तिक में वैशेषिकों का मत प्रस्तुत करते हुए यह स्पष्ट किया है – **"विमोहस्य यतः षद्दार्थतत्त्वज्ञस्य वैराग्यवतः सुखदुःखेच्छाद्वेषाभावः, इच्छाद्वेषाभावाद्धर्माधर्माभावः, तदभावे संयोगाभावोऽप्रादुर्भावश्च स मोक्षः।"**[18] महर्षि कणाद ने भी मोक्ष की प्राप्ति स्पष्टतया तत्त्वज्ञान से कही है – **"धर्मविशेषप्रसूताद् द्रव्यगुणकर्मसामान्यविशेषसमवायानां पदार्थानां साधर्म्यवैधर्म्यानां तत्त्वज्ञानान्निःश्रेयसम्।"**[19]

इस प्रकार वैशेषिक दर्शन के सिद्धांतों में भीतत्त्वज्ञान से मुक्ति और अज्ञान से बंध मानने से सम्यक्त्व और मिथ्यात्व की अवधारणा सिद्ध है।

---

[15]महर्षि गौतम (2000, 1/1/2)

[16]महर्षि गौतम (2000, 1/1/2); *न्यायभाष्य*

[17]महर्षि गौतम (2000, 4/2); *न्यायभाष्य भूमिका*

[18]उमास्वामी (1982, 1/1); वार्तिक 44, वृत्ति

[19]कणाद (1961, 1/1/4) [Online]https://ia902902.us.archive.org/28/items/20200315_20200315_0731/%E0%A4%B5%E0%A5%88%E0%A4%B6%E0%A5%87%E0%A4%B7%E0%A4%BF%E0%A4%95%20%E0%A4%B8%E0%A5%82%E0%A4%A4%E0%A5%8D%E0%A4%B0.pdf

वेदान्त-दर्शन :

वेदान्त दर्शन में ब्रह्म-ज्ञान को प्रमुख माना है। आत्मा को ब्रह्म के सदृश देखना ही आत्म-ज्ञान है, ब्रह्म-ज्ञान है। प्रसिद्ध श्रुतियों **"अहं ब्रह्मास्मि", "तत्त्वमसि"**में आत्म-ब्रह्म की यही एकता बताई है। यह एकता का ज्ञान ही विद्या है। यह विद्या ही मोक्ष का मूल है। इसी विद्या से अविद्या की निवृति होकर आत्मलाभ की सिद्धि होती है। वही माधवाचार्य ने वेदान्त दर्शन के मत में लिखा है – **"ततश्च तत्त्वमस्यादिविद्यया तदविद्यानिवृत्तौ निरतिशयानन्दात्मलाभरूपपरमपुरुषार्थः सेत्स्यति।.. अनाद्यविद्यया स्वभावान्तरं नीत आत्मा मातृस्थानीयया तत्त्वमसीत्यादिकया श्रुत्या स्वभावं नीयते।"**[20]

ब्रह्म ज्ञान का अभाव ही अविद्या है। इसी से समस्त संसार उत्पन्न होता है। आत्म-साक्षात्कार होने पर वह अविद्या नष्ट हो जाती है और उसका कार्य संसार भी नष्ट हो जाता है। वेदांत दर्शन के सुप्रसिद्ध दार्शनिक शंकराचार्य ने शाङ्कर-भाष्य में कहा है कि जीव के ईश्वर तुल्य धर्मवत्त्व होने पर भी अविद्या के प्रभाव से वह तिरोहित है। इसीलिए ईश्वर के स्वरुप के अज्ञान से बंध और ज्ञान से मुक्ति होती है – **"ईश्वरस्वरूपापरिज्ञानाद्बन्धस्तत्स्वरूपपरिज्ञानात्तु मोक्षः।"**[21]

वेदान्तसार में दो प्रकार की मुक्ति का उल्लेख है – जीवनमुक्त और विदेहमुक्त। ये भेद जैनदर्शन में कहे हुए अर्हन्त और सिद्धों के भेद के समान है। इनमें जो ब्रह्मज्ञानी, अविद्या के नष्ट होने पर ब्रह्म में लीन हो जाता है, किन्तु शेष प्रारब्ध वश उसका शरीर पूर्ववत् चलता रहता है, उसे जीवनमुक्त कहते हैं। उस जीवनमुक्ति के लिए अज्ञान का नाश ही एक कारण बताया है – **"जीवन्मुक्तो नाम स्वस्वरूपाखण्डब्रह्मज्ञानेन तदज्ञानबाधनद्वारा स्वस्वरूपाखण्डब्रह्मणि साक्षात्कृतेऽज्ञान-तत्कार्यसञ्चितकर्मसंशयविपर्ययादीनामपि बाधितत्वादखिलब्रह्मरहितो ब्रह्मनिष्ठः।"**[22]प्रारब्ध समाप्त हो जाने पर वह जीवन-मुक्त, देह को छोड़कर विदेहमुक्त हो जाता है।

अतः अविद्या ही संसार का हेतु है और आत्म-साक्षात्कार रूप विद्या ही मोक्ष के लिए मूल है। इस प्रकार वेदान्त दर्शन में भी सम्यक्त्व और मिथ्यात्व की अवधारणा प्राप्त होती है।

मीमांसा-दर्शन :

मीमांसा-दर्शन वेदाधारित दर्शन है। इसमें वेदों के कर्म-काण्ड रूप अंग की मीमांसा है। मीमांसा का प्रारंभिक स्वरूप कर्म-प्रधान था। इसलिए पूर्वमीमांसकों के लिए कर्म-काण्ड द्वारा स्वर्ग की प्राप्ति ही मोक्ष है।

मीमांसकों के अनुसार यह जगत मिथ्या है। अविद्या के कारण सत्य प्रतिभासित होता है। अविद्या के नाश से इस जगत का प्रलय हो जाता है और जीव ब्रह्म में लीन होकर मुक्त हो जाता है। हरिभद्र सूरि, मीमांसकों के इस अभिमत को स्पष्ट करते हुए कहते हैं – **"अविद्याऽपरनाममायावशात्प्रतिभासमानः सर्वः प्रपञ्चोऽपारमार्थिकः।"**[23]

प्रो० हरेन्द्र प्रसाद ने मीमांसकों के अनुसार मुक्ति की अवधारणा इस प्रकार लिखी है –

"मीमांसा के मतानुसार मोक्ष की प्राप्ति, ज्ञान और कर्म से संभव है।... आत्मज्ञान मोक्ष के लिए आवश्यक है, क्योंकि आत्मज्ञान ही धर्माधर्म के संचय को रोककर शरीर के आत्यंतिक उच्छेद का कारण हो जाता है।"[24]

मीमांसक, आत्मा से शरीर, इंद्रिय और विषयों के संबंध को ही बंधन मानते हैं, तथा उसका विलय ही उनके अनुसार मोक्ष है।उसका साधन, ज्ञान और कर्म समुच्चय है। वे कहते हैं -

[20]माधवाचार्य (1981, पृष्ठ 756)
[21]शङ्कराचार्य (1982, 3/2/5)
[22]सदानंद (1999, 71, पृष्ठ 148)
[23]हरिभद्रसूरि (1981, 76); *तर्करहस्यदीपिका*
[24]सिन्हा, ह. (2016, पृष्ठ 292)

"निवृतिरात्मा मोहस्यज्ञातत्वेनोपलक्षितः"।

इस प्रकार मीमांसा दर्शन में अविद्या द्वारा संसार और विद्या द्वारा मोक्ष का कथन है। वे ज्ञान को मोक्ष का साधन कहते हैं। अतः उनमें भी सम्यक्त्व-मिथ्यात्व की अवधारणा स्वीकार की जा सकती है।

सांख्य-दर्शन :

सांख्य दर्शन तत्त्व-प्रधान है। इसमें प्रकृति आदि 25 तत्त्वों का व्याख्यान किया गया है। इन 25 तत्त्वों में 24 तत्त्व प्रकृति से संबंधित हैं और एक तत्त्व पुरुष है। इस प्रकार प्रधान रूप से दो ही तत्त्व बताएं हैं, प्रकृति और पुरुष। यह भेद जैन दर्शन के जीव-अजीव विभाग के समान है।

सांख्यों के अनुसार प्रकृति और पुरुष दोनों भिन्न तत्त्व हैं। इनमें प्रकृति अचेतन है और पुरुष चेतन। प्रकृति और पुरुष का भेद दिखाते हुए ईश्वर कृष्ण कहते हैं –

"त्रिगुणमविवेकी विषयः सामान्यमचेतनं प्रसवधर्मि।
व्यक्तं तथा प्रधानं तद्विपरीतस्तथा च पुमान्॥"[25]

पुरुष, प्रकृति से विपरीत है। इसे 'ज्ञ' तत्त्व कहा है। इन दोनों के संयोग से ही सृष्टि की उत्पत्ति होती है और इन दोनों के वियोग से ही मुक्ति होती है। प्रकृति और पुरुष में एकत्व का भ्रम ही अज्ञान है। भेद-ज्ञान से ही इनका वियोग होता है। यही संसार के नाश का हेतु बनता है।

साङ्ख्यों के अनुसार प्रकृति-पुरुष के अंतर परिज्ञान से ही मोक्ष होता है और प्रकृतिकृत कार्यों में आत्माभिमान से बंध होता है। साङ्ख्यकारिका में तो लिखा ही है – **"ज्ञानेन चापवर्गो विपर्ययादिष्यते बन्धः"**[26]। इसी को स्पष्ट करते हुए आचार्य अकलंक लिखते हैं – **"यदास्य... प्रकृतिपुरुषान्तरपरिज्ञानमाविर्भवति तेनापवर्गः।.. प्रकृतिषु अनात्मीयासु आहङ्कारिकेषु वैकारिकेषु चेन्द्रियेषु आत्मत्वाभिमानः स विपर्ययः, तस्माद्बन्धः"**[27]।

अतः मुक्ति के लिए सर्वप्रथम प्रकृतिपुरुष का भेदज्ञान आवश्यक है।यह भेदज्ञान तत्त्वों के अभ्यास द्वारा उत्पन्न होता है। 25 तत्त्वों के सम्यक् अभ्यास से जब पुरुष यह जानता है कि प्रकृतिजनित समस्त कार्य मेरे नहीं हैं वे मैं नहीं हूँ, उनसे मैं भिन्न हूँ, तब उसे विशुद्धज्ञान होता है। ईश्वरकृष्ण कहते हैं –

"एवं तत्त्वाभ्यासान्नास्मि न मे नाऽहमित्यपरिशेषम्।
अविपर्ययाद्विशुद्धं केवलमुत्पद्यते ज्ञानम्॥"[28]

इसी कारिका के गौडपादभाष्य में इस तत्त्वज्ञान को मोक्ष का कारण कहा गया है – **"...मोक्षकारणमुत्पद्यतेऽव्यंज्यते ज्ञानं पञ्चविंशतितत्त्वज्ञानं पुरुषस्येति।"** इस प्रकार होने वाले प्रकृति पुरुष के भेद को विवेक कहा जाता है। जिन भी इन्द्रिय आदि कार्यों में पुरुष को अज्ञान वश अपनत्व था, ज्ञान होने पर वह पुरुष, उन सभी में ऐसा जानता है कि ये मैं नहीं हूँ। यही उसका विवेक है। सांख्यसूत्र में कहा है – **"तत्त्वाभ्यासान्नेति नेतीति त्यागाद् विवेकसिद्धिः।"**[29]इस विवेक की ख्याति ही सांख्यों के अनुसार मोक्ष का मूल है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सांख्य दर्शन में भी विवेक और अविवेक के रूप में सम्यक्त्व और मिथ्यात्व की अवधारणा

[25]ईश्वरकृष्ण (1990, 11)
[26]ईश्वरकृष्ण (1990, 44)
[27]उमास्वामी (2013, 1/1); *तत्त्वार्थवार्तिक*, वार्तिक 43, वृत्ति
[28]ईश्वरकृष्ण (1990, 64)
[29]महर्षि कपिल (1989, 3/76)

विद्यमान है।

योग-दर्शन :

सांख्य दर्शन से योग दर्शन साम्य अत्यधिक है। योगदर्शन में सांख्यविहित तत्त्वों को स्वीकारते हुए भी मोक्ष की सिद्धि में योगसाधना की प्रमुखता बताई है। उनके अनुसार अनादिबद्ध पुरुष, जब योग के अनुष्ठान द्वारा सत्त्व और भेद-ज्ञान को प्राप्त कर लेता है, तब अविद्या आदि क्लेशों के पूर्ण नष्ट हो जाने से और कुशल-अकुशल कर्मों के अभाव से जीव को कैवल्य की प्राप्ति होती है। यद्यपि इस मोक्षप्राप्ति में योगसाधना प्रथम कर्त्तव्य है, तथापि भेद-ज्ञान के बिना व अविद्या के नाश बिना मुक्ति की प्राप्ति नहीं होती। इस प्रकार मोक्ष के मार्ग में विद्या अथवा ज्ञान का महत्वपूर्ण स्थान है।

योग दर्शन में पाँच प्रकार के क्लेश बताएं गए हैं – **"अविद्यास्मितारागद्वेषाभिनिवेशाः क्लेशाः"**[30] **।** इन पाँच क्लेशों में अविद्या सबसे प्रमुख और आधारभूत है। पतंजलि ने अगले ही सूत्र में अविद्या को सभी क्लेशों का मूल कहा है। अतः सभी क्लेशों के अभाव के लिए विद्या ही एकमात्र हेतु सिद्ध होती है। यह विद्या और अविद्या, जैनदर्शनाभिमत सम्यक्त्व और मिथ्यात्व के सदृश है।

योगों के अनुसार विपरीत निर्णय का नाम ही अविद्या है। जो वस्तु जिसरूप नहीं है, उसे उस रूप मानना ही अविद्या है।उसे स्पष्ट करते हुए योगसूत्र में कहा है – **"अनित्याशुचिदुःखानात्मासु नित्यशुचिसुखात्मख्यातिरविद्या।"**[31]अनित्य में नित्य, अशुचि में शुचि, दुःख में सुख और अनात्म में आत्मा का भ्रम करना ही अविद्या है। तदनुसार अनित्य आदि वस्तुओं का यथार्थ ज्ञान ही विद्या है। उसी से मोक्ष की प्राप्ति होती है – **"अविद्या तत्कृतो बन्धस्तन्नाशो मोक्ष उच्यते।"**[32]

सभी क्लेशों के अभाव हो जाने पर प्रकृति और पुरुष के अंतर परिज्ञान पूर्वक सभी कार्यों का प्रकृति में लय हो जाता है। ऐसी अवस्था में पुरुष को मुक्ति की प्राप्ति होती है। योगों में वह प्रकृति और पुरुष के अंतर का परिज्ञान, विवेक-ख्याति नाम से प्रसिद्ध है। और उनको एक जानना अविवेकख्याति कहलाती है। वह विवेक ख्याति, विद्या से और अविवेक ख्याति अविद्या से उत्पन्न होती है। योगसूत्र की भोजदेवकृत वृत्ति में यह लिखा है – **"या पूर्वं विपर्य्यासात्मिका मोहरूपाऽविद्या व्याख्याता, सा तस्याविवेकख्यातिरूपस्य संयोगस्य कारणम्"**[33] **।**

विवेकख्याति से अविवेक का नाश होकर प्रकृति-पुरुष का भेद होता है। वही मोक्ष है। वृत्ति से भी यह स्पष्ट होता है – **"जातायां विवेकख्यातौ अविवेकनिमित्तः संयोगः स्वयमेव निवर्त्तत इति तस्य हानं, यदेव च संयोगस्य हानं तदेव नित्यं केवलस्यापि पुरुषस्य कैवल्यं व्यपदिष्यते।"**[34]अतः विद्या, विवेकख्याति का मूल है और विवेक-ख्याति ही मोक्ष का मूल है। इस विवेक-ख्याति को माधवाचार्य ने 'सम्यग्दर्शन' पद से भी अभिहित किया है।

अतः योगदर्शन में भी विद्या, विवेक और अविद्या, अविवेक के रूप मे सम्यक्त्व और मिथ्यात्व की अवधारणा स्पष्ट होती है।

उपसंहार :

इस प्रकार विविध भारतीय दर्शनों के अवलोकन से यह स्पष्ट होता है कि एक चार्वाक को छोड़कर सभी दर्शनों में विविधरूपों में सम्यक्त्व और मिथ्यात्व सदृश अवधारणा विद्यमान है। सभी ने मोक्ष को ही अपना चरम लक्ष्य स्वीकार किया है,

[30]महर्षि पतञ्जलि (2008, 2/3)
[31]महर्षि पतञ्जलि (2008, 2/5)
[32]माधवाचार्य (1981, पृष्ठ 594)
[33]महर्षि पतञ्जलि (2008, 2/24); *राजमार्तण्डवृति*
[34]महर्षि पतञ्जलि (2008, 2/25); *राजमार्तण्डवृति*

और तदर्थ सम्यक्त्व की प्राप्ति व मिथ्यात्व का अभाव ही उसका मुख्य साधन बताया है। इनमें जैन-दर्शन में इनकी व्याख्या अधिक व्यापक, विस्तृत और व्यवस्थित है।शेष दर्शनों में सम्यक्त्व को विद्या, ज्ञान, विवेक, बुद्धि आदि और मिथ्यात्व को अविद्या, अज्ञान, अविवेक आदि नामों से कहा है। सभी दर्शनों ने इनका जो स्वरूप माना है उसमें भी अंतर है। तथापि एक सिद्धांत की दृष्टि से वह अवधारणा समान है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :

1. अमृतचन्द्राचार्य, (2010),*पुरुषार्थसिद्ध्युपायः* (पण्डित टोडरमल, व्याख्या; गम्भीरचन्द जैन, अनु,; यशपाल जैन, सं,), पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट, जयपुर।
2. ईश्वरकृष्ण (1990), *सांख्यकारिका* (ज्वालाप्रसाद गौड व्याख्यायित), चौखंबा विद्याभवन
3. उमास्वामी, (2013),*तत्त्वार्थसूत्र (सर्वार्थसिद्धि-समन्वित)* (पूज्यपादाचार्य, व्याख्याकार; सिद्धान्ताचार्य फूलचन्द, सं,), भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली।
4. उमास्वामी-आचार्य (1982), *तत्त्वार्थसूत्र (तत्त्वार्थवार्तिक-समन्वित)*,(अकलङ्काचार्य, वार्तिककार;महेन्द्रकुमारन्यायाचार्य, सं०), भारतीयज्ञानपीठ, दिल्ली
5. कणाद (1961), *वैशेषिकसूत्र* (मुनिश्री जम्बूविजय संपादित), ओरिएन्टल इंस्टिट्यूट
6. कुन्दकुन्दाचार्य, (2010),*समयसार (आत्मख्याति-तात्पर्यवृत्ति-व्याख्याद्वयसमन्वित)*,(अमृतचन्द्र-आचार्य व्याख्या; जयसेनाचार्य, व्याख्या; क्रमानुरूप), हेमचन्दजैन (सं०), पारस-मूलचन्द-चतर-चैरिटेबल-ट्रस्ट, कोटा।
7. त्रिपिटकाचार्य राहुल सांकृत्यायन (अनु.) (1933), *मज्झिम-निकाय*, महाबोधि सभा
8. पूज्यपादाचार्य, इष्टोपदेश (आशाधर, व्याख्या, गुलाबचन्द गांधी – देवेन्द्रकुमार, अनु एवं सं) श्री कुन्दकुन्दकहान दिगम्बर जैन तीर्थ सुरक्षा ट्रस्ट मुम्बई
9. भदन्त-आनन्द-कौसल्यायन (अनु.) (1946), धम्मपद, हिन्दुस्तानी पब्लिकेशन्स
10. महर्षि कपिल (1989), *सांख्यदर्शन* (जनार्दन शास्त्री पाण्डेय संपादित), मोतीलाल बनारसीदास
11. महर्षि गौतम (2000), *न्यायदर्शन* (आशुबोध और नित्यबोध संपादित), चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान
12. महर्षि पतञ्जलि (2008), *पतञ्जलियोगसूत्र* (बी. के. एस. आयंगार संपादित), प्रभात प्रकाशन
13. वसुबन्धु (1988), *अभिधर्मकोश*, काशी विद्यापीठ
14. शङ्कराचार्य (1982), *ब्रह्मसूत्रशाङ्करभाष्य* (हनुमानदास व्याख्यायित), चौखंबा विद्याभवन
15. शिवार्य आचार्य, (2013),भगवती-आराधना (सदासुखदास, व्याख्या; विमला जैन, सं,), श्री कुन्दकुन्द-कहान-पारमार्थिक ट्रस्ट, मुम्बई।
16. सदानंद (1999), *वेदान्तसार* (आद्याप्रसाद मिश्र व्याख्यायित), अक्षयवट प्रकाशन
17. सिन्हा, ह. (2016), *भारतीय दर्शन की रूपरेखा*, मोतीलाल बनारसीदास
18. हरिभद्रसूरि (1981), *षड्दर्शनसमुच्चय* (महेंद्रकुमार जैन संपादित), भारतीय ज्ञानपीठ.